



प्रकाशन हेतु अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

द्वितीय अपील क्रमांक 209 2004

अपीलार्थीगण

विशाल एवं अन्य

(वादीगण)

विरुद्ध

प्रत्यर्थीगण

रामजी एवं अन्य

(प्रतिवादीगण)

निर्णय के उद्घोषणा हेतु दिनांक 28/02/2012 को नियत।



हस्ताक्षरित/-

(एन.के. अग्रवाल)

न्यायाधीश

27/02/2012



छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

द्वितीय अपील क्रमांक 209 2004

अपीलार्थीगण / वादीगण

1. विशाल, पिता जगत, आयु लगभग 45 वर्ष।
2. सुरित, पिता जगत, आयु लगभग 35 वर्ष।
3. परदेश, पिता जगत, आयु लगभग 30 वर्ष।

उपरोक्त समस्त निवासी ग्राम बिडौरा।

4. कैना बाई, पति पुनऊ, आयु लगभग 46 वर्ष, निवासी ग्राम
कुकुरमुड़ा, तहसील छुईखदान, जिला राजनांदगांव (छ.ग.)।

5. अनुज, पिता केशो, आयु लगभग 21 वर्ष।

6. कन्हैया, पिता केशो, आयु लगभग 19 वर्ष।

7. केशो, पिता कुँवर सिंह, आयु लगभग 60 वर्ष।

उपरोक्त समस्त निवासी ग्राम सोनपर, तहसील साजा, जिला दुर्ग
(छ.ग.)।

8. जमुना बाई, पति सहाबू, आयु लगभग 30 वर्ष, निवासी ग्राम
गड़ापाट, तहसील साजा, जिला दुर्ग (छ.ग.)।

विरुद्ध

प्रत्यर्थीगण / प्रतिवादीगण

1. रामजी, पिता दिनेश, आयु लगभग 35 वर्ष।
2. लखन, पिता दिनेश, आयु लगभग 30 वर्ष।



3. हिरोडी, पति दिनेश, आयु लगभग 55 वर्ष।

उपरोक्त समस्त कृषक, निवासी ग्राम बिडौरा, तहसील कवर्धा,

जिला कबीरधाम (छ.ग.)।

4. छत्तीसगढ़ राज्य, द्वारा कलेक्टर, कबीरधाम (छ.ग.)।

द्वितीय अपील, सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अंतर्गत

एकल पीठ : माननीय श्री न्यायमूर्ति एन.के. अग्रवाल

उपस्थित :

श्री एच.बी. अग्रवाल, वरिष्ठ अधिवक्ता, साथ में सुश्री सरीना खान,

अपीलार्थियों की ओर से अधिवक्ता।

श्री मलय श्रीवास्तव,

प्रत्यर्था क्रमांक 1 से 3 की ओर से अधिवक्ता।

श्री अखिल अग्रवाल, पैनल अधिवक्ता (P.L.),

राज्य / प्रत्यर्था क्रमांक 4 की ओर से।

निर्णय

(दिनांक 28.02.2012 को प्रदत्त)

1. यह वादियों द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अंतर्गत प्रस्तुत द्वितीय

अपील है, जो अतिरिक्त जिला न्यायाधीश (एफ.टी.सी.), कवर्धा द्वारा सिविल अपील क्रमांक

34-A/2002 में दिनांक 27.02.2004 को पारित निर्णय एवं डिक्री के विरुद्ध दायर की गई



है, जिसके द्वारा व्यवहार न्यायाधीश, वर्ग-2 द्वारा सिविल वाद क्रमांक 139-A/1994 में दिनांक 08.08.1996 को पारित निर्णय एवं डिक्री की पुष्टि की गई है।

2. इस अपील को निम्नलिखित महत्वपूर्ण विधि प्रश्नों पर सुनवाई हेतु स्वीकृत किया गया:

“(1) क्या अधीनस्थ न्यायालयों ने वादियों के वाद को इस आधार पर निरस्त कर त्रुटि की है कि प्रतिवादी क्रमांक 1 से 3 ने खसरा क्रमांक 181 की भूमि पर प्रतिकूल कब्जे के आधार पर अपना अधिकार सिद्ध कर लिया है, जबकि निर्विवाद रूप से यह पक्षकारों के मध्य भूमि के विनिमय के कारण अनुमतिपूर्ण कब्जे का मामला है?

(2) क्या 100/- रुपये से अधिक मूल्य की भूमि का विनिमय, पंजीकरण अधिनियम, 1908 के प्रावधानों के अंतर्गत किसी अभिलेख के पंजीकरण के बिना वैध रूप से किया जा सकता है?”

प्रकरण के संक्षिप्त तथ्य निम्नानुसार हैं :

(i) यह निर्विवाद है कि अपीलार्थीगण स्वर्गीय जगत के विधिक प्रतिनिधि हैं तथा प्रत्यर्थी क्रमांक 1 से 3 स्वर्गीय दिनेश के विधिक प्रतिनिधि हैं। ग्राम बिडौरा स्थित खसरा क्रमांक 181, क्षेत्रफल 8.34 एकड़ भूमि स्वर्गीय जगत की स्वामित्वाधीन थी तथा उसी ग्राम में स्थित खसरा क्रमांक 129, क्षेत्रफल 3.23 एकड़ भूमि स्वर्गीय दिनेश की स्वामित्वाधीन थी। वाद दायर किए जाने से लगभग 30-35 वर्ष पूर्व, स्वर्गीय जगत ने अपनी भूमि (वादग्रस्त भूमि) के 20 डेसिमल का कब्जा स्वर्गीय दिनेश को हस्तांतरित किया तथा इसके बदले में उसने दिनेश की भूमि के 40 डेसिमल पर कब्जा प्राप्त किया। स्वर्गीय दिनेश ने स्वर्गीय जगत से प्राप्त भूमि पर दो कमरों का मकान निर्मित किया और अपने जीवनकाल तक उसमें निवास करता रहा। स्वर्गीय दिनेश की मृत्यु के पश्चात, प्रतिवादीगण



वर्ष 1992 में एक और कमरा निर्मित किया गया तथा वे उसमें निवास कर रहे हैं।

विनिमय की तिथि से पूर्व जगत तथा उनकी मृत्यु के पश्चात् अपीलार्थी विनिमय में स्वर्गीय दिनेश से प्राप्त भूमि पर कृषिकीय कब्जे में हैं।

(ii) वादीगण के कथनानुसार, स्वर्गीय जगत ने स्वर्गीय दिनेश को वादग्रस्त भूमि पर अस्थायी रूप से मकान निर्माण करने तथा 2 से 4 वर्ष तक उसमें निवास करने की अनुमति दी थी तथा इसके बदले में दिनेश ने अपनी 40 डिसमिल भूमि का कब्जा जगत को हस्तांतरित किया था। किन्तु वादग्रस्त भूमि का स्वामित्व कभी हस्तांतरित नहीं किया गया और न ही कोई पंजीकृत विनिमय विलेख निष्पादित किया गया, तथा वादग्रस्त भूमि अब भी अपीलार्थीगण के नाम पर अभिलेखित है। विवाद तब उत्पन्न हुआ जब प्रत्यर्थीगण ने वादग्रस्त भूमि पर एक और कमरा निर्माण करना प्रारंभ किया

(iii) प्रत्यर्थीगण ने वादपत्र के कथनों का खंडन किया तथा यह अभिवेदन किया कि जगत एवं दिनेश के मध्य भूमि के विनिमय का लेन-देन यद्यपि पंजीकृत नहीं था, तथापि वह स्थायी था तथा स्वामित्व के हस्तांतरण के आशय से किया गया था। उक्त लेन-देन के अनुसरण में दोनों पक्षकार एक-दूसरे की भूमि के कब्जे में आ गए। स्वर्गीय दिनेश ने वादग्रस्त भूमि पर पक्का मकान निर्मित किया तथा उस पर व्यय भी किया और तब से पूर्व में दिनेश तथा उनकी मृत्यु के पश्चात् प्रत्यर्थीगण 35 वर्ष से अधिक अवधि से शांतिपूर्ण एवं निर्बाध कब्जे में हैं। प्रत्यर्थीगण ने प्रतिकूल कब्जे द्वारा अपना स्वत्व प्राप्त कर लिया है।

(iv) पक्षकारों ने साक्ष्य प्रस्तुत किया। विचारण न्यायालय ने विधायक बिंदु विरचित किए।

(v) विचारण न्यायालय ने अन्य बातों के साथ यह निष्कर्ष निकाला कि वादीगण द्वारा यह सिद्ध करने में असफलता रही कि पक्षकारों के मध्य कब्जे का हस्तांतरण अस्थायी था;



प्रत्यर्थागण वादग्रस्त भूमि का कब्जा प्राप्त करने के पश्चात् विनिमय के पश्चात् वे 35 वर्षों की अवधि तक निरंतर एवं शांतिपूर्ण कब्जे में हैं; प्रत्यर्थागण ने प्रतिकूल कब्जे द्वारा अपना स्वत्व पूर्ण कर लिया है; वादीगण भी प्रत्यर्थागण को हस्तांतरित भूमि पर स्वत्व का दावा करने से विबंधित हैं; तथा उनके द्वारा याचित अनुसार अपीलार्थियों को वैकल्पिक अनुतोष प्रदान की गई।

(vi) वादीगण ने प्रथम अपील प्रस्तुत की। प्रथम अपीलीय न्यायालय ने साक्ष्यों के पुनः विवेचन के पश्चात् उपर्युक्त निष्कर्षों की पुष्टि की तथा अपील खारिज कर दी।

4. श्री एच.बी. अग्रवाल, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता, जो अपीलार्थियों की ओर से उपस्थित हुए, ने जोरदार तर्क प्रस्तुत किया कि भूमि के विनिमय का मौखिक लेन-देन, पंजीकरण के अभाव में, ग्राह्य नहीं है तथा इससे प्रत्यर्थियों को कोई स्वत्व प्राप्त नहीं होता। वादग्रस्त भूमि पर प्रत्यर्थियों का कब्जा मात्र अनुमतिपूर्ण था और अधीनस्थ दोनों न्यायालयों ने यह मानते हुए त्रुटि की है कि प्रत्यर्थियों ने प्रतिकूल कब्जे के आधार पर अपना अधिकार सिद्ध कर लिया है, क्योंकि जब तक प्रत्यर्थी प्रतिकूल कब्जे का स्पष्ट दावा प्रस्तुत नहीं करते, तब तक अनुमतिपूर्ण कब्जा प्रतिकूल नहीं माना जा सकता। उन्होंने अपने तर्क के समर्थन में राम क्रिस्टो मंडल बनाम धनकिस्टो मंडल, शियोधारी राय बनाम सूरज प्रसाद सिंह तथा माउंट अल्लाह रखी बनाम शाह मोहम्मद अब्दुर रहीम के निर्णयों पर तथा इस न्यायालय के निर्णय राम गोपाल दीक्षित बनाम श्यामलाल के कंडिका 21 पर भरोसा किया।

5. इसके विपरीत, श्री मलय श्रीवास्तव, विद्वान अधिवक्ता, जो प्रत्यर्थी क्रमांक 1 से 3 की ओर से उपस्थित हुए, ने आक्षेपित निर्णय एवं डिक्री का समर्थन करते हुए तर्क प्रस्तुत किया कि प्रत्यर्थागण वादग्रस्त भूमि पर 35 वर्षों से अधिक अवधि से निरंतर एवं शांतिपूर्ण कब्जे में हैं; यह लेन-देन अस्थायी न होकर स्थायी प्रकृति का था; पक्षकारों का अभिप्राय भूमि के स्वामित्व का हस्तांतरण



करना था। यद्यपि मौखिक लेन-देन से पक्षकारों को कोई विधिक अधिकार प्राप्त नहीं होता, तथापि प्रत्यर्थी तथा वादीगण, दोनों ही एक-दूसरे की भूमि पर 30-35 वर्षों से अधिक समय से कब्जे में हैं, अतः उन्होंने प्रतिकूल कब्जे के माध्यम से एक-दूसरे की भूमि पर अपना स्वत्व प्राप्त कर लिया है। उन्होंने आगे यह भी तर्क प्रस्तुत किया कि स्वर्गीय दिनेश ने वादग्रस्त भूमि का कब्जा प्राप्त करने के पश्चात उस पर पक्का मकान निर्मित किया तथा उस पर व्यय किया, अतः ऐसी स्थिति में प्रदाता द्वारा लाइसेंस भी निरस्त नहीं किया जा सकता और यह अपील भ्रामक एवं निराधार है।

6. मैंने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना तथा अधीनस्थ दोनों न्यायालयों के अभिलेखों का, जिसमें आक्षेपित निर्णय एवं डिक्री भी सम्मिलित हैं, परिशीलन किया है।

7. मैं सर्वप्रथम इस न्यायालय द्वारा विनिर्धारित द्वितीय विधि प्रश्न के सारवान प्रश्न परीक्षण करूँगा।

8. संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 118, जो "विनिमय (Exchange)" को परिभाषित करती है, इस प्रकार है :

जब दो व्यक्ति एक वस्तु का स्वामित्व किसी अन्य वस्तु के स्वामित्व के लिए परस्पर अंतरण करते हैं तथा उन दोनों वस्तुओं में से कोई भी धन नहीं है, या दोनों वस्तुएँ ही धन हैं, तब वह व्यवहार "विनिमय" कहलाता है।

विनिमय को पूर्ण करने के लिए संपत्ति का अंतरण उसी प्रकार से किया जाएगा, जैसा ऐसी संपत्ति के विक्रय द्वारा अंतरण के लिए उपबंधित है।

उपर्युक्त प्रावधान के अवलोकन मात्र से यह स्पष्ट होता है कि जब दो व्यक्ति एक वस्तु के स्वामित्व का परस्पर अंतरण दूसरी वस्तु के स्वामित्व के लिए करते हैं, तब वह लेन-देन "विनिमय" कहलाता है, बशर्ते कि वह केवल धन का विनिमय न हो। आगे यह भी कि विनिमय की पूर्णता के लिए संपत्ति का अंतरण उसी प्रकार किया जा सकता है, जैसा ऐसी



संपत्ति के विक्रय के लिए उपबंधित है। अतः 100/- रुपये या उससे अधिक मूल्य की मूर्त अचल संपत्ति का विनिमय, यदि पंजीकृत लिखत द्वारा नहीं किया गया है, तो वह भारतीय पंजीकरण अधिनियम की धारा 17 के प्रावधानों के दृष्टिगत अवैध है, जो ऐसे लिखत के अनिवार्य पंजीकरण का उपबंध करती है, तथा धारा 49 के अनुसार वह लेन-देन के साक्ष्य के रूप में भी ग्राह्य नहीं है।

9. उपर्युक्त विधिक स्थिति विधि द्वारा सुव्यवस्थित है, अतः उपर्युक्त विधि प्रश्न के सारवान उत्तर अपीलार्थियों के पक्ष में देने में कोई कठिनाई नहीं है। तदनुसार, मैं यह अभिमत व्यक्त करता हूँ कि पक्षकारों के मध्य हुआ भूमि के विनिमय का मौखिक लेन-देन न तो वैध है और न ही साक्ष्य के रूप में ग्राह्य है।

10. अब इस न्यायालय द्वारा विनिर्धारित मुख्य एवं प्रथम विधि के सारवान प्रश्न पर आते हुए, अधीनस्थ दोनों न्यायालयों ने समवर्ती रूप से यह अभिलिखित किया है कि उक्त लेन-देन स्थायी प्रकृति का था तथा उक्त लेन-देन के अनुपालन में स्वर्गीय दिनेश ने स्थायी प्रकृति का कार्य किया, अर्थात् लगभग 30-35 वर्ष पूर्व दो कमरों का मकान निर्मित किया तथा उस पर व्यय भी किया। वादियों/अपीलार्थियों द्वारा कब्जा प्राप्त करने हेतु वाद वर्ष 1992 में दायर किया गया, जबकि वादग्रस्त भूमि का कब्जा वाद दायर किए जाने से 30-35 वर्ष पूर्व ही हस्तांतरित कर दिया गया था। अतः प्रत्यर्थियों ने प्रतिकूल कब्जे (Adverse Possession) के माध्यम से स्वत्व प्राप्त सिद्ध (परिपूर्ण) कर लिया है।

11. कलेक्टर, बॉम्बे बनाम नगर निगम, बॉम्बे शहर एवं अन्य, ए.आई.आर. 1951 एस.सी.

469 के प्रकरण में, भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने ऐसे मामले में, जहाँ बॉम्बे नगर निगम तथा उसके पूर्वाधिकारी उस भूमि के कब्जे में थे, जिस पर उनका कोई विधिक स्वत्व नहीं था, यह अभिनिर्धारित किया कि—



जिस व्यक्ति के पास कोई विधिक स्वत्व नहीं है, तथापि वह भूमि पर स्थायी रूप से तथा बिना किराया (rent) के, बाजार स्थापित करने के उद्देश्य से, एक अवैध अनुदान के आधार पर कब्जा रखता है, तो ऐसा कब्जा, किसी विधिक अधिकार से संबंधित न होने के कारण, प्रथम दृष्टया उस भूमि के स्वामी अर्थात् शासन के विधिक स्वामित्व के प्रतिकूल माना जाएगा, उसी समय से जब निगम के पूर्वाधिकारी ने उक्त अवैध अनुदान के अधीन भूमि का कब्जा ग्रहण किया।

12. उपर्युक्त प्रकरण में भारत के सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रतिपादित विधि सिद्धांत का अनुसरण करते हुए, **पश्चिम बंगाल राज्य बनाम दालहौजी इंस्टीट्यूट सोसाइटी, ए.आई.आर. 1970 एस.सी. 1778** के मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने अपने निर्णय के कंडिका 16 एवं 17 में निम्नानुसार अभिलिखित किया है—

16. हमारे समक्ष ऐसा कोई अभिलेख/सामग्री प्रस्तुत नहीं किया गया है जिससे यह प्रदर्शित हो सके कि अनुदान विधि द्वारा अपेक्षित तरीके से किया गया है, यद्यपि तथ्यतः उक्त स्थल का अनुदान संस्थान के पक्ष में किया गया है। विशेष भूमि अर्जन न्यायाधीश तथा उच्च न्यायालय द्वारा जिस साक्ष्य पर निर्भर किया गया है, वह भी स्पष्ट रूप से स्थापित करता है कि प्रतिवादी 60 वर्षों से अधिक अवधि तक उक्त स्थल के खुले, निरंतर एवं निर्बाध कब्जे तथा उपभोग में रहा है। इस संबंध में उच्च न्यायालय द्वारा उल्लिखित दस्तावेजी साक्ष्य स्पष्ट रूप से यह स्थापित करता है कि प्रत्यर्थी को उक्त स्थल का स्वामी न केवल निगम द्वारा, बल्कि शासन द्वारा भी माना गया है। प्रत्यर्थी का कब्जा शासन द्वारा प्रदत्त अनुदान के आधार पर रहा होगा, जो निस्संदेह विधि में अवैध है। ऐसे कब्जे का विधिक प्रभाव क्या होगा, इस विषय पर इस न्यायालय द्वारा बम्बई के कलेक्टर बनाम बम्बई नगर का म्युनिसिपल कॉर्पोरेशन, 1952 एस.सी.आर. 43 = (ए.आई.आर. 1951 एस.सी. 469) में निम्नानुसार



विचार किया गया है—

“..... प्रत्यर्थी निगम तथा उसके स्वत्व के पूर्ववर्ती की स्थिति एक ऐसे व्यक्ति की थी जिसके पास कोई वैध स्वत्व नहीं था, किन्तु इसके बावजूद वह भूमि के कब्जे में एक अवैध अनुदान के आभास के अधीन, स्थायी रूप से तथा बाजार के प्रयोजन हेतु किराया-मुक्त रूप में बना रहा। ऐसा कब्जा किसी वैध स्वत्व से संबंधित न होने के कारण, प्रथम दृष्टया विधिक स्वत्व के प्रतिकूल था यह तर्क दिया गया कि जिस क्षण निगम के स्वत्व के पूर्ववर्ती ने अवैध अनुदान के अधीन भूमि का कब्जा प्राप्त किया, उसी क्षण से शासन को भूमि का स्वामी माना जाना चाहिए। यह कब्जा खुले रूप से, अधिकारपूर्वक तथा निर्बाध रूप से 70 वर्षों से अधिक अवधि तक जारी रहा है और प्रतिवादी निगम ने तथा उसके स्वत्व के पूर्ववर्ती ने इस संपूर्ण अवधि के दौरान उपभोगाधिकार अर्जित कर लिया है, अर्थात् भूमि को धारण करने का अधिकार शाश्वत रूप से किराया-मुक्त, किन्तु केवल बाजार के प्रयोजनों के लिए, सन् 1865 के शासन संकल्प के अनुसार ...।”

17. उपर्युक्त उद्धरण से यह स्थापित होता है कि ऐसे कब्जे में रहने वाला व्यक्ति प्रतिकूल कब्जे के आधार पर स्पष्ट रूप से स्वत्व अर्जित कर लेता है। वर्तमान प्रकरण में इस बिंदु पर उच्च न्यायालय तथा विशेष भूमि अर्जन न्यायाधीश द्वारा प्रतिवादी के पक्ष में समवर्ती निष्कर्ष अभिलिखित किए गए हैं और हम उन निष्कर्षों से सहमत हैं।

13. वर्तमान वाद में, अधीनस्थ दोनों न्यायालयों द्वारा प्रतिकूल कब्जे के प्रश्न पर प्रत्यर्थागण के पक्ष में समवर्ती निष्कर्ष अभिलिखित किए गए हैं तथा उपर्युक्त संदर्भित प्रकरणों में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रतिपादित विधि-सिद्धांत (ratio of law) को लागू करते हुए, मैं भी उन निष्कर्षों से सहमत हूँ।

14. “उच्चतम न्यायालय ने, श्योधारी राय एवं अन्य बनाम सूरज प्रसाद सिंह एवं अन्य पूर्वोक्त वाद



में, यह पाते हुए कि अपीलार्थियों का कब्जा मात्र अनुज्ञात्मक था, क्योंकि उनके द्वारा प्रस्तुत किराया-रसीदें यह दर्शाती थीं कि वे वाद संस्थित किए जाने के पूर्व 12 वर्षों तक प्रतिवादियों के स्वामित्वाधिकार को स्वीकार करते रहे थे, यह अभिनिर्धारित किया कि— प्रतिवादियों द्वारा दी गई अनुमति केवल अनुज्ञात्मक होने के कारण, यह माना जाएगा कि प्रत्यर्थागण प्रथम पक्ष के माध्यम से कब्जे में थे।”

15. वर्तमान प्रकरण में, अधीनस्थ दोनों न्यायालयों द्वारा समवर्ती रूप से यह अभिधारित किया गया है कि पक्षकारों का आशय स्वामित्व का अंतरण करना था तथा प्रत्यर्थागण का कब्जा अनुज्ञात्मक कब्जा नहीं था। यद्यपि स्वामित्व का अंतरण मौखिक था और विधिमान्य नहीं था, तथापि संव्यवहार की तिथि से प्रत्यर्थागण का कब्जा, प्रथमदृष्टया, वादियों के भूमि-स्वामी होने के विधिक स्वामित्वाधिकार के प्रतिकूल कब्जा माना जाएगा, उस समय से जब प्रत्यर्थागण के स्वामित्वाधिकार-पूर्ववर्ती ने अवैध अनुदान के अधीन भूमि का कब्जा ग्रहण किया था। अतः उपर्युक्त वाद में उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रतिपादित विधि-सिद्धांत से अपीलार्थियों को कोई सहायता प्राप्त नहीं होती।

16. उच्चतम न्यायालय ने, राम क्रिस्टो मंडल एवं अन्य बनाम धनकिस्टो मंडल पूर्वीत वाद में यह अभिनिर्धारित किया है कि— जो व्यक्ति किसी विधवा द्वारा अपने पति से उत्तराधिकार में प्राप्त संपत्ति पर बारह वर्ष अथवा उससे अधिक अवधि तक प्रतिकूल कब्जे में रहा हो, वह केवल विधवा के किसी कृत्य या लोप के आधार पर, ऐसी विधवा की मृत्यु के पश्चात् निकटवर्ती उत्तरभोगी के विरुद्ध उस संपत्ति पर प्रतिकूल अधिकार धारण करने का अधिकारी नहीं हो जाता। निकटवर्ती उत्तरभोगी, यदि संपत्ति अचल हो, तो विधवा की मृत्यु की तिथि से बारह वर्ष के भीतर अनुच्छेद 141 के अधीन उस संपत्ति का कब्जा पुनः प्राप्त करने का अधिकारी होता है। यह सिद्धांत केवल अनुच्छेद 141 पर ही आधारित नहीं है, अपितु यह हिन्दू विधि के सिद्धांतों तथा इस सामान्य सिद्धांत के अनुरूप भी है कि संभाव्य उत्तराधिकार की प्रकृति का होता है और वह अपना



अधिकार विधवा के माध्यम से अथवा उससे प्राप्त नहीं करता; अतः यदि वह विधवा की उपेक्षा या सहनशीलता के कारण अपना अधिकार खो दे, तो यह प्रत्यक्षतः अन्यायपूर्ण होगा।”

17. उपर्युक्त सिद्धांत भी वर्तमान प्रकरण के तथ्य एवं परिस्थितियों में लागू नहीं होता। वादीगण का यह प्रकरण नहीं है कि स्वर्गीय जगत राम को वादग्रस्त संपत्ति में कोई परिसीमित हित प्राप्त था, और न ही अपीलार्थी अपना अधिकार उनके माध्यम से दावा कर रहे हैं।

18. माउण्ट अल्लाह रखी एवं अन्य बनाम शाह मोहम्मद अब्दुर रहीम एवं अन्य पूर्वित वाद में प्रिवी काउंसिल द्वारा प्रतिपादित इस विधि-सिद्धांत से कोई विवाद नहीं है, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि प्रतिकूल कब्जे को सिद्ध करने का भार प्रत्यर्थीगण पर होता है।

इसी प्रकार, राम गोपाल दीक्षेना एवं अन्य बनाम श्यामलाल एवं अन्य पूर्वित वाद में इस न्यायालय

द्वारा भी यह अभिनिर्धारित किया गया है कि— एक बार यह धारण कर लिया जाए कि प्रतिवादियों

का कब्जा न तो उनके स्वयं के अधिकार में है और न ही वादी के प्रतिकूल है, तब वादी और

प्रत्यर्थीगण, पिता एवं पुत्र होने के कारण, आवश्यक निष्कर्ष यह होगा कि प्रतिवादी क्रमांक 1

अनुज्ञात्मक कब्जे में है तथापि, कलेक्टर ऑफ बॉम्बे बनाम म्युनिसिपल कॉर्पोरेशन ऑफ द सिटी

ऑफ बॉम्बे एवं अन्य तथा पश्चिम बंगाल राज्य बनाम द डालहौजी इंस्टीट्यूट सोसायटी पूर्वित वादों

में उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रतिपादित विधि-सिद्धांत के परिप्रेक्ष्य में, प्रत्यर्थीगण का कब्जा

वादियों/अपीलार्थियों के भूमि-स्वामी होने के विधिक स्वामित्वाधिकार के प्रतिकूल उसी क्षण से

माना जाएगा, जब स्वर्गीय दिनेश ने मौखिक एवं अवैध अनुदान के अधीन उक्त भूमि का कब्जा

ग्रहण किया था। अतः प्रिवी काउंसिल तथा इस न्यायालय द्वारा उपर्युक्त वादों में प्रतिपादित विधि-

सिद्धांत भी अपीलार्थियों के किसी सहायतार्थ नहीं हैं।

19. इस विषय को एक अन्य दृष्टिकोण से भी देखा जा सकता है। अधीनस्थ दोनों न्यायालयों ने

समवर्ती रूप से यह अभिधारित किया है कि स्वर्गीय दिनेश ने स्थायी प्रकृति का निर्माण कार्य,



अर्थात् आवासीय मकान, निष्पादित किया था तथा उसके निर्माण में व्यय भी वहन किया था। अतः भारतीय सुखचार अधिनियम, 1882 की धारा 60(ख) के परिप्रेक्ष्य में, यदि कोई अनुज्ञप्ति थी भी, तो वह अब अपरिवर्तनीय हो गई है। जो व्यक्ति यह जानते हुए मौन बना रहता है और किसी अन्य व्यक्ति को इस विश्वास में अपनी भूमि पर निर्माण करने देता है कि उसे ऐसा करने की शक्ति या प्राधिकार प्राप्त है, तथा वह व्यक्ति ऐसे निर्माण में व्यय भी करता है, तो बाद में वह यह कहकर उस निर्माण को हटाने का दावा नहीं कर सकता कि निर्माणकर्ता को निर्माण करने का कोई प्राधिकार नहीं था। अपने आचरण के कारण वह ऐसी कार्यवाही अपनाने से प्रतिषिद्ध हो जाता है और ऐसे मामलों में विधि उसके द्वारा प्राधिकार प्रदान किया जाना उपधारित करेगी; जैसा कि मध्यप्रदेश उच्च न्यायालय ने रामबिलास पिता अमलसाय एवं अन्य बनाम जगताराम पिता रामप्रसाद, 2000 (2) एम.पी.एल.जे. 170 में अभिनिर्धारित किया है, जिससे मैं भी आदरपूर्वक सहमत हूँ। इसके अतिरिक्त, अपीलार्थी अब भी उस भूमि के कब्जे में हैं, जो उन्हें वादग्रस्त भूमि के विनिमय में प्राप्त हुई थी, और वे उसके लाभ-फल का उपभोग कर रहे हैं। अब लगभग 35 वर्षों की अवधि के पश्चात् वे प्रत्यर्थीगण को, जो वादग्रस्त भूमि पर निर्मित मकान में निवास कर रहे हैं, बेदखल करना चाहते हैं। प्रथमदृष्टया, अपीलार्थियों का उपर्युक्त आचरण न्यायसंगत एवं साम्यपूर्ण प्रतीत नहीं होता।”

20. प्रकरण के प्रत्येक पहलू पर विचार करते हुए, मेरे विचार में प्रत्यर्थीगण का वादग्रस्त भूमि पर कब्जा अनुज्ञात्मक नहीं था, अपितु उन्होंने प्रतिकूल कब्जे द्वारा उक्त वादग्रस्त भूमि पर अपना स्वत्व पूर्ण कर लिया है। विचारण न्यायालय ने अपीलार्थियों को उनके द्वारा याचित अनुसार वैकल्पिक अनुतोष उचित रूप से प्रदान की है। इस प्रकार निर्धारित प्रथम विधि के सारवान प्रश्न का उत्तर तदनुसार दिया जाता है।

21. उपर्युक्त कारणों से, यह अपील असफल होती है और एतद् द्वारा खारिज की जाती है।

22. व्यय के संबंध में कोई आदेश नहीं।



23. तदनुसार डिक्री तैयार की जाए।

हस्ताक्षरित/-

(एन.के. अग्रवाल)

न्यायाधीश

अस्वीकरण: हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा । समस्त कार्यालयीन एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरुप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।

Translated By: Aastha Verma

